(IJASSH) 2017, Vol. No. 4, Jul-Dec **e-ISSN: 2455-5150, p-ISSN: 2455-7722**

BHAKTI SENTIMENT INHERENT IN SAINT POETRY: A STUDY

Dr. (Smt.) Ranjana Kulshreshtha

Associate Professor & HOD (Hindi), Th. Biri Singh College, Tundla, Firozabad

संत काव्य में निहित भक्ति भावना— एक अध्ययन

डॉ० (श्रीमती) रंजना कुलश्रेष्ठ

एसोसियेट प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष (हिन्दी) ठा० बीरी सिंह महाविद्यालय टूण्डला फिरोजाबाद

संतकाव्य का सामान्य अर्थ है वह काव्य जो काव्य संतों के द्वारा रचा गया । किन्तु हिन्दी के क्षेत्र में संतकाव्य का तात्पर्य वह काव्य है, जो हिन्दी साहित्य के स्वर्ण युग के नाम से अभिहित भक्ति काल के निगुर्ण भक्ति शाखा के ज्ञानभार्गी शाखा के कवियों के द्वारा रचा गया काव्य। भारत में संत काव्य का प्रारम्भ 1267 ई० में महाराष्ट्र के महान संत श्री नामदेव के द्वारा माना जाता है। संत काव्य परम्परा हिन्दी साहित्य के भक्तिकाल की निर्गुण काव्यधारा से सम्बंद्ध है निर्गुण काव्य धारा में संत काव्य धारा व सूफी काव्य धारा प्रवाहित हुई। अधिकांश विद्धानों का मत है कि वह व्यक्ति जिसने संत रुपी परमतत्व को प्राप्त कर लिया हो वही संत है । इस काव्य धारा के प्रमुख कवि नामदेव, कबीरदास, रैदास, नानक मलूकदास, दादूदयाल, रज्जबदास सुंदरदास आदि है।

कबीरदास को संत काव्य का सर्वश्रेष्ठ कवि माने जाने का गौरव प्राप्त है ऐसा माना जाता है कि इनका जन्म एक विधवा ब्राहमणी से हुआ और सामाजिक कुरीतियों के भय से वाराणसी के लहरतार नामक तालाब की सीडियों पर छोड़ दिया। नीरु और नीमा नाम के एक जुलाही दम्पति के द्वारा इनका पालन पोषण किया गया इनके गुरु का नाम रामानंद था। उनके कुछ पद गुरु ग्रंथ साहिब में संकलित है इनकी प्रमाणिक रचना 'बीजक' है जिसके तीन भाग है साखी, सबद, रमैनी। रैदास जी रामानंद के शिष्य थे और गुरु नानक देव संत काव्य परम्परा के प्रमुख कवि के रुप में जाने जाते है, इनकी रचनाऐं 'गुरु ग्रंथ

(IJASSH) 2017, Vol. No. 4, Jul-Dec **e-ISSN: 2455-5150, p-ISSN: 2455-7722**

साहब' में 'महला' प्रकरण में संकलित है। 'दादूदयाल' की प्रमुख रचना 'हरड़े वाणी' है। मलूक दास की प्रमुख रचना है — रामअवतार , ब्रजलीला, ध्रुबचंरित है।

भक्ति कालीन साहित्य में निर्गुण संत कवियों का अप्रतिम योगदान है इन्होने जनमानस को प्रभावित कर निर्गुण ईश्वर की भक्ति पर बल दिया इन्होंने ईश्वर के अवतारवाद और वहुदेव बाद का विरोध किया और निराकार ब्रहम की उपासना पर अधिक बल दिया है, उनका कथन है कि दशरध के पुत्र राम ईश्वर नही है बल्कि ईश्वर वह है जिसका कोई रंगरुप, आकार नहीं है। संत कवियों का मानना है कि ईश्वर उनके मन में निवास करता है उसे मंदिर, मज्जिद, गुरुद्वारे अथवा अन्य किसी भी धार्मिक स्थानों पर ढूंढना व्यर्थ है वह कहते है —

कस्तूरी कुंडल बसै मृगडूढे वन माहि
ऐसे घट-घट राम है दुनियाँ देखे नाही,
नानक कहते है —'काहे रे वन खोजत जाहि'
कबीरदास का अनुसार — 'घट माही खोजो'

स्पष्ट है कि उनका ईश्वर पौराणिक देवी देवताओं से भिन्न है जिसका न कोई आकार है न कोई रुप रंग है वह सर्वत्र विधमान है।

संतो का जीवन गंगा की तरह पवित्र धारा के समान पवित्र रुप से बहता रहता है लगभग सभी संतों ने अपने सम्पूर्ण जीवन में भारत का कई बार भ्रमण किया एवं अपने उपदेशों के माध्यम से समाज के सभी वर्गों को ज्ञान व नई दिशा प्रदान की। संत नामदेव, कबीर, रैदास आदि ने अपनी भक्तिमयी ज्ञान के अधिक से अधिक नर,नारी सभी के निए समाजोपयोगी, आदर्शों को स्थापित किया, ऊँच-नीच, जाति-पाति, छूआ-छूत, हिन्दू-मुस्लिम, ब्राहय आडम्बरों आदि को समाज से दूर करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

रैदास कहते है - जुगलिया चाम का सारा
बतारे मिश्रा कौन चाम से न्यारा।।
चाय की माता चाम के पिता, चाय का जनन हारा ।।
चाम की गाय, चायदा बछड़ा, चाय का दुहनहारा।।
X X X X X
कह रबिदास सुनो रे, विप्रो जो चामसे न्यारा सो गुरु हमारा। , इसमें रविदास जी विभिन्न उपमाओक माध्यम से एक तत्व की ही सर्वत्र व्यापक्ता बताते है।

(IJASSH) 2017, Vol. No. 4, Jul-Dec **e-ISSN: 2455-5150, p-ISSN: 2455-7722**

अध्यात्य और सन्तों का आधाराधेय सम्बन्ध है। अध्यात्य ही सन्तकाव्य का प्रधान प्रतिपाद्य है। निर्गुणिए सन्तों ने समाज, राजनीति, अर्थ, प्रकृति आदि का अध्यात्य के पोषक-व्यंजक तत्व के रुप में अंगीकार किया है। चूँकि सन्तों का उद्देश्य सम्पूर्ण मानवता का सांस्कृतिक अभ्युत्थान करना था और संस्कृति की व्याप्ति से समाज, राजनीति, अर्थ, प्रकृति आदि बाहर नही हैं; इन तत्वों का संस्कृतिक उन्नयन में नितान्त महत्व है, क्योंकि संस्कृति अपने युग के लोक जीवन को तो अभिभूत करती ही है, साथ-ही-साथ समानान्तर लोकजीवन की मान्यतओं को भी शनैः - शनैः अपने में समाहित करती हुई चलती है; इसीलिए सन्तों ने अपनी आध्यात्यिक चेतना के साथ और उस आध्यात्मिक चेतना को और अधिक व्यंजक और बोधगम्य बनाने के लिए राजनीतिक और आर्थिक अनेक सन्दर्भों की अवतारणा की है।

सन्तों की दृष्टि और चित्त में उनके प्रभु के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं विद्यमान था; लेकिन समाज की, राजनीति की तथा अर्थ की अस्मिता इतनी अपरिहार्य और प्रबल होती है कि वह सबके चित्त को आकृष्ट कर लेती है। सन्तगण भी इन सत्ताओं की नितान्तता तथा चमक-दमक से अपनी दृष्टि को बचा नही पाये हैं, भले ही वे इनसे अभिभूत नहीं हुए, इन्हें मन से तथा सकारात्मक रुप से स्वीकार नहीं किया। सन्तगण राजनीति और अर्थ ही अनेक छवियों से भली-भांति परिचित है, इसीलिए जहाँ उन्हें अपने अध्यात्य की निगूढता की प्रतीति करानी पड़ी है, वहाँ उन्होंने इन सन्दर्भों का सहारा लिया है। वस्तुतः सन्तों ने राजनीति, प्रकृति और अर्थ के रुपों-प्रतिरुपों की उद्भावना अध्यात्म-व्यंजक उपादन के रुप में की है।

सन्त-साहित्य का मूल स्वर भक्ति है; क्योंकि सन्त कवि नहीं, मूलत: भक्त थे। भक्ति उनके जीवन, फिर काव्य की अनिवार्य प्रतिबद्धता थी। ईश्वरानुराग ही उनका सर्वस्व था। इस प्रकार भक्ति के ही अन्तरा से उनके काव्य का अंकुर उन्मिषित हुआ था और उस अंकुर की परिणति भक्ति में हुई। वास्तव में, भक्ति ही सन्तों का आदि- मध्य-अन्त है, भक्ति ही उनकी जीवन-शैली है, जीवन-मूल्य है और जीवन तथा काव्य का परम लक्ष्य भी है। सन्तों की ऐसी भक्ति-भावना का भावन विशिष्ट अर्थवन्ता से अन्वित है।

भक्ति की भावना वाहय दृष्टि से जितनी सरल प्रतीत होती है, अन्तरीण दृष्टि से — तात्विक दृष्टि से उतनी ही निगूढ है। फिर भी आचार्यों - विचारकों, ऋषियों-मुनियों, भावुक भक्तों, ज्ञानी संतो ने अपने ढंग

से इसे स्वरुपित करने का प्रयास किया है। उनकी धारणाओं मान्यताओं के आलोक में भक्ति की अवधारणा का अध्ययन किया है।

शाब्दिक निर्वचन की दृष्टि से 'भक्ति' शब्द 'भज' सेवायाम धातु में 'क्तिन' प्रत्यय के प्रयोग से निर्मित होता है, जिसका अर्थ है— अनुराग, श्रद्धा, सम्मान, सेवा पूजन- [2] धार्मिक क्षेत्र में आराध्य, ईश्वर, देवता आदि के प्रति होने वाला वह श्रद्धापूर्ण अनुराग, जिसके फलस्वरुप वह सदा उसका अनुयायी रहता है, अपने आप कर्म उसका वशवर्ती मानता है, भक्ति है- [3] । भक्ति को भावित करके शाण्डिल्य ने अतिशय ईश्वरनराग को भक्ति की संज्ञा प्रदान की है- [4]।

नारद ने इसे परम प्रेमरुपा तथा अमृत स्वरुपा घोषित करते हुए कहा है कि भक्ति को अधिगत करके मानव सिद्ध, अमर और तृप्त हो जाता है- [5]। इतना ही नही, भक्ति की प्राप्ति से मानव न तो किसी वस्तु की अभिलाषा करता है, न शोक करता है और न उसे किसी व्यक्ति-वस्तु के प्रति आसक्ति ही रहती है, वह विषय-भोगों से उदासीन हो जाता है और आत्मानन्द के अनुभव साक्षात्कार से वह सांसारिकता से विरहित होकर आनन्दमग्न रहता है- [6]।

'श्री मद्भगवतद्गीता' ने भी भक्ति के सन्दर्भ में अपनी धारणा अभिव्यंजित की है। भक्ति को स्वरुपित करता हुआ भागवतकार लिखता है कि मनुष्य के लिए सर्वश्रेष्ठ धर्म वही है जिसके द्वारा भगवान कृष्ण में भक्ति हो, भक्ति भी ऐसी हो, जिसमें किसी प्रकार की कामना न हो और जो निरन्तर बनी रहे, ऐसी भक्ति से ह्रदय आनन्द स्वरुप भगवान को प्राप्त करके कृतकृत्य हो जाता है- [7]। आचार्य वल्लभ का अभिमत है कि भगवान में माहात्म्यपूर्वक सुदृढ़ और सतत स्नेह ही भक्ति है। इससे सुगम मुक्ति का दूसरा उपाय नहीं है- [8]। रामानुजाचार्य तैल धारा की भाँति अविच्छिन्न मनोनिवेश को भक्ति कहते हैं- [9], और रामानन्द का मत है कि मानस का नियमन करके अनन्यभाव से भगवत्परायण होकर की गयी उपाधि-विर्मुक्त परमात्म सेवा भक्ति है- [10]। 'भक्तिरसामृत सिन्धु' में लिखा है कि सब प्रकार की उपाधियों से अर्थात फल की कामनाओं से विनिर्मुक्त विशुद्ध अर्थात ज्ञान-कर्मादि सम्पर्क या संकर से रहित और तन्मयता से समस्त इन्द्रिय-कर्म के द्वारा भगवान कृष्ण का सेवन भक्ति कहलाता है- [11]। डॉ० हरिश्चन्द्र वर्मा के अनुसार भगवान के स्वरुप का आनन्दभाव से भावन ही भक्ति है- [12]। वास्तव में, भक्ति एक मनोमयी भावदशा है। परमतत्व के प्रति अपनी सम्पूर्ण चेतना को ऊर्ध्वगामी बनाकर उसका अनवरत अनुध्यान-अनुभावन ही भक्ति है।

(IJASSH) 2017, Vol. No. 4, Jul-Dec **e-ISSN: 2455-5150, p-ISSN: 2455-7722**

भक्ति-आचार्यों ने ईश्वरोपासना को दृष्टिपथ में रखकर भक्ति के अनेक भेद बताये है-[13]। साधन भक्ति, भावभक्ति और प्रेम भक्ति। जो भक्त के व्यापार से सिद्ध हो सकने वाली हो और जिसके द्वारा भावरुपा भक्ति की सिद्धि हो सकती है। वही साधन भक्ति कहलाती है-[14]।

श्रीमद्भभागवत में भी भक्ति-भेद पर प्रकाश डाला गया है, डॉ० मलिक मोहम्मद ने लिखा है कि जिन परिस्थितियों ने तमिल प्रदेश वैष्णव भक्ति आन्दोलन को जन्म दिया, लगभग वही परिस्थियों तेरहवी-चाँदहवी शताब्दियों में हिन्दी प्रदेश में वर्तमान थी-[15]।

आधुनिक युग में भी भारत भूमि संत महात्माओं से भरी पड़ी है जिसके ज्ञान और भक्ति के सांमजस्य से ग्रहस्थ जीवन का निर्वाह करने वाले सांसरिक मनुष्यों को सन्मार्ग पर चलने की प्रेरणा मिलती है जहाँ संतो ने एक और सामाजिक ज्ञान एकता और नैतिकता को बढ़ावा देने का कार्यकिया वहीं निम्न जाति के लोगों को हीन भावना से उबारने के संकेत भी दिये। संतो की ज्ञान वर्धक मंगल गयी वाणी के आलोक में भक्ति भावना का समान रुप से पल्लवन हुआ। संतो की वाणी और उनकी भक्ति भावना का समाज पर व्यापक प्रभाव को नकारा नही जा सकता। संत काव्य का मुख्य लक्ष्य भक्ति था, लेकिन उस भक्ति के साथ ही सामान्य अशिक्षित जनता में सत्य का निरुपण करना, और कथनी करनी में तारतम्यता पर बल देना तथा रामनाम के मार्धुय को जनता तक पहुँचाना था जिसमें वह काफी हद तक सफल रहे हैं।

संदर्भ सूची

1. संतरविदास—एम०एस०शर्मा पृ० प्रकाशन नईसदी बुबहाउस दिल्ली।
2. सं० चतुर्वेदी द्वारका प्रसाद शर्मा, संस्कृत-शब्दार्थ कौस्तुभ, पृ० 816
3. सं० धीरेन्द्र वर्मा, मानक हिन्दी कोशः तीसरा खंड पृ० 188
4. नारद भक्तिसूत्र 2-4
5. सा परानुरक्तिरीश्वरे। — शाण्डिल्य भक्ति सूत्र 1/1/2
6. नारदभक्ति सूत्र 3-6
7. सर्वे पुंसां पराधर्मो यताभिक्तधोक्षजो। अहै तुक्य प्रतिहता यथाऽऽत्या संप्रसीदति।। डॉ० हरवंशलाल शर्मा, सूर और उनका साहित्य पृ० 225

8. महात्म्य पूर्वस्तु सुदृढः सर्वतोऽधिकः। स्नेहो भक्तिरिति प्रोक्तस्त या मुक्तिर्नचान्था।। तत्वदीप निबन्ध, श्लोक-46
9. डॉ० उदयभानु सिंह, तुलसी दर्शन मीमांसा पृ०263 से
10. वहीं।
11. सर्वोपाधि विनिर्मुक्तं तत्परत्वेन निर्मलय। ह्रषीकेण ह्रषेकेश सेवमं भक्तिरुच्यते।। हिन्दी भक्ति रसामृत सिन्धु पृ० 11
12. डॉ० हरिचन्द्र वर्मा, तुलसी-साहित्य में नीति, भक्ति और दर्शन पृ० 76
13. सा भक्तिः साधन भावः प्रेमा चेति त्रिधोदिता। हिन्दी भक्तिरसायृत सिन्धु पृ० 22
14. कृतिसाध्या भवेत साध्यभावा सा साधनाभिधा हिन्दी भक्ति रसामृत सिन्धु पृ० 23
15. डॉ० मलिक मोहम्मद वैष्णव भक्ति आन्दोलन का अध्ययन पृ० 340

REFERENCES

1. Sant Ravidas, M.S. Sharma, P. Publication, Nai Sadi Book House, Delhi
2. St. Chaturvedi Dwarka Prasad Sharma, Sanskrit Shabdarth Kaustubh, Pg. 816
3. St. Dheerendra Verma, Manak Hindi Kosh, Third Part, pg 188
4. Narad Bhaktisootra 2-4
5. Sa Paranuraktirishware, Shandilya Bhakti Sootra 1/1/2
6. Narad Bhaktisootra 3-6
7. Dr Harvanshlal Sharma, soor and his literature pg 225
8. Tatvadeep Nibandh, Shlok 46
9. Dr Udaybhanu Singh, Tulsi Darshan Mimansa pg 263
10. Hindi Bhakti Rasamrit Sindhu, pg 11
11. Dr Harichandra Verma, Tulsi Sahitya me Neeti, Bhakti or Darshan, pg 76
12. Hindi Bhaktirasayrit Sindhu, pg 22
13. Hindi Bhaktirasayrit Sindhu, pg 23
14. Dr Malik Mohammad, Vaishnav Bhakti Andolan Ka Adhyayan pg 340